

विक्रम संवत्-२०३६, श्रावण पक्ष-२, बुधवार, ता. २७-८-१९८०  
 पयनामृत-३४४, ३४६. प्रपचन नं. २०

जब तक सामान्य तत्त्व-ध्रुव तत्त्व-ज्यालमें न आये, तब तक अंतरमें मार्ग कहांसे सूजे और कहांसे प्रगट हो? इसलिये सामान्य तत्त्वको ज्यालमें लेकर उसका आश्रय करना चाहिये. साधकको आश्रय तो प्रारंभसे पूर्णता तक ओक ज्ञायकका ही-द्रव्यसामान्यका ही-ध्रुव तत्त्वका ही होता है. ज्ञायकका-‘ध्रुव’का जोर ओक क्षण भी नहीं हटता. दृष्टि ज्ञायकके सिवा किसीको स्वीकार नहीं करती-ध्रुवके सिवा किसी पर ध्यान नहीं देती; अशुद्ध पर्याय पर नहीं, शुद्ध पर्याय पर नहीं, गुणभेद पर नहीं. यद्यपि साथ वर्तता हुआ सबका विवेक करता है, तथापि दृष्टिका विषय तो सदा ओक ध्रुव ज्ञायक ही है, वह कभी छूटता नहीं है.

पूज्य गुरुदेवका ऐसा ही उपदेश है, शास्त्र भी ऐसा ही कहते हैं, वस्तुस्थिति भी ऐसी ही है. ३४४.

३४४. सूक्ष्म बात है, भैया! यह तो आत्माकी बात है. हो-होमें कुछ मिलनेवाला नहीं है. बाहरमें हो-हो. आलाहा..! यहां तो, ‘जब तक सामान्य तत्त्व...’ जब तक सामान्य तत्त्व ‘ध्रुव तत्त्व-ज्यालमें न आये,...’ मुद्देकी रकम है. भगवान आत्मा चैतन्य रत्नाकर दीपक, बडा देव, वह जब तक सामान्य तत्त्व अर्थात् ध्रुव तत्त्व ज्यालमें न आये ‘तब तक अंतरमें मार्ग कहांसे सूजे...’ आलाहा..! बाहरकी चाहे जितनी प्रवृत्तिमें लाजों, कोडो पैसा भर्य करे, बाहरमें धामधूम (करे), प्रभु! मार्ग तो बिलकुल निवृत्तिका है. अंतरमें शांतिका सागर, उस ओर जाकर उसमें बसे बिना, उसे निजघर बनाये बिना दूसरी चीज कोई भी करे, उससे जन्म-मरण नहीं मिटेंगे. आलाहा..! इसमें वद्वताका काम नहीं है, कोई कोडो रुपया भर्य करे तो जन्म-मरण मिटे, ऐसा नहीं है. आलाहा..!

‘जब तक सामान्य तत्त्व...’ सामान्य तत्त्व अर्थात् आत्मा ध्रुव. आला..! पुण्य-पाप तो नहीं, परवस्तु तो नहीं, वर्तमान पर्याय भी जिसके लक्ष्यमें नहीं लेनी है, उस पर्यायको तो ध्रुवको लक्ष्यमें लेना है. आलाहा..! यह सार है. ‘सामान्य तत्त्व-ध्रुव तत्त्व ज्यालमें न आये, तब तक अंतरमें मार्ग कहांसे सूजे...’ आला..!

तब तक अंतरमें जानेका रास्ता, जिसने रास्ता ही नहीं देखा, जिसने रास्ता नहीं देखा है, वह अंदरमें कैसे जाये? अंदरमें जानेकी जो कला और रीत है, वह नहीं जानी है तो अंदरमें कैसे जा सके? और अंदरमें जा सके बिना जन्म-मरणका अंत प्रभु, आये जैसा नहीं है. दुनियामें चाहे जितनी बाहरसे उद्घास बताये या उद्घास करे, परंतु यह चीज समझे बिना सब बिना अंकके शून्य हैं. आलाला..!

कहते हैं, 'तब तक अंतरमें मार्ग कहांसे सूझे और कहांसे प्रगट हो?' जो लक्ष्यमें ही नहीं लिया, तो उस मार्गकी सूझ कहांसे पड़े? सूझ न पड़े तो प्रगट तो कहांसे होगा? पर्यायमें प्रगट सामान्यका आनंदका अनुभव आना चाहिये, वह प्रगटमें ध्रुवके ज्वाल बिना अंतरमें प्रवेश किये बिना, उस आनंदका ज्वाल नहीं आता. और आनंदका ज्वाल न आये तो वह तत्त्व कैसा है (वह मालूम नहीं पड़ता. आलाला..! भगवान आनंदकी मूर्ति प्रभु है. आला..! अतीन्द्रिय आनंद, सर्वांगमें अतीन्द्रिय आनंद. लडी, चमडीका लक्ष्य छोड दे, प्रभु! यह तो बाहरकी धूलकी वस्तु है. अंदरमें कर्म है वह भी परचीज है. पुण्य और पापका भाव हो वह भी संसार है. आलाला..! संसरण इति संसार. स्वर्ग सामान्यमेंसे हटकर पुण्य-पापमें आता है वह संसार है.

यहां तो कहते हैं, वहांसे हटकर अंतरमें न आये, तब तक कहांसे सूझे और कहांसे प्रगट हो? आलाला..! 'ईसलिये सामान्य तत्त्वको ज्वालमें लेकर...' सार यह है, प्रभु! समवसरणमें तो अरबों मनुष्य, कोडों मनुष्य (आते हैं). बाघ, सिंह और नाग (आते हैं), उसमें भगवानकी दिव्यध्वनि जैसा कलती है. आलाला..! भगवानकी दिव्यध्वनिका यह सार है. आलाला..! जानपना चाहे जितना है, बाध क्रियाकांड चाहे जितनी भी हो, परंतु ध्रुव ज्वालमें आये बिना अंतरमें कैसे जाना वह मालूम न पड़े तो जाना कहांसे? आलाला..! जैसा मार्ग है. 'उसका आश्रय करना चाहिये.' ईसलिये, ईस कारणसे 'सामान्य तत्त्वको...' अकड़प रहनेवाले तत्त्वको, पर्याय बिनाकी चीज जो है, उसको ज्वालमें लेकर 'उसका आश्रय करना चाहिये.' ज्वालमें लेकर आश्रय करना चाहिये. जो ज्वालमें ही न आये, ज्ञानमें चीज न आये, तो उसका आश्रय कहांसे होगा? आलाला..! जो भगवान अंदर अतीन्द्रिय आनंदका नाथ नजरमें, ज्वालमें, ज्ञानमें ज्ञेय रूपसे ज्वालमें न आये तो वहां धरनेका, प्रवेश करना कैसे बने? किसमें प्रवेश करे? वस्तुको तो जाना नहीं. आलाला..! उपरकी माथापर्यी करनेवाले व्रत, नियम, तपको करे तो उससे कोई आत्मा प्राप्त नहीं होता. आलाला..! वह तो चिदानंद सहजानंदमूर्ति प्रभु (है).

‘साधकको आश्रय तो प्रारंभसे पूर्णता तक अेक ज्ञायकका ही-’ साधकजव-धर्मीको प्रारंभसे आश्रय लेकर ‘प्रारंभसे पूर्णता तक...’ सम्यग्दर्शन प्रारंभ, सिद्धपद पूर्ण. वहां तक आत्माका आश्रय करना. आलाहा..! दिशा पलट देनी, प्रभु! पर-ओरकी दशाकी ओर दशा है, पर-ओरकी दिशाकी ओर जो दशा है, वल तो मिथ्यात्व और विकार है. आलाहा..! अपने प्रभुके सिवा बाहरकी चीजकी दिशाकी ओर ज्ञाना वल तो संसार है. आलाहा..! कठिन लगे. पंच परमेष्ठीके सामने देजे तो भी राग और संसार है. क्योंकि परद्रव्य है. परद्रव्यमें ज्ञाना, लक्ष्य करनेसे तो राग ही आता है. आलाहा..!

‘साधकको...’ शांतिका साधक. धर्मका अंतर साधक. उसे ‘आश्रय तो प्रारंभसे पूर्णता तक अेक ज्ञायकका ही...’ आश्रय है. ज्ञायक-ज्ञानन स्वभावका पिंड. उसका ही पहलेसे पूर्णता तक आश्रय तो उसका है. बीचमें याहे जितनी प्रवृत्ति आये, लेकिन आश्रय तो द्रव्यका है. द्रव्यका आश्रय छूटता नहीं. आलाहा..! ‘अेक ज्ञायकका ही-द्रव्यसामान्यका ही..’ उसका अर्थ-वाँनका अर्थ. ज्ञायक यानी क्या? ज्ञायक माने क्या? ज्ञायक अर्थात् द्रव्यसामान्य. वाँन की है न? वल ज्ञायकका अर्थ किया. द्रव्यसामान्य जो त्रिकावी भगवान, अनादिअनंत सनातन सत्य जो अनादिसे गुप्त है, अपनी कला जीवी नहीं, और अपनी कला जीवे बिना संसारकी याहे जो भी कला हो, उर कला, उसमें कोँ संसारका अंत नहीं आता. आलाहा..! ‘ध्रुव तत्त्वका ही होता है.’ कला न? ‘साधकको आश्रय तो प्रारंभसे पूर्णता तक अेक ज्ञायकका ही...’ आलाहा..! बीचमें व्यवहार आये वल तो ज्ञाननेवायक है. आलाहा..! आश्रय और अवलंबन तो अेक ज्ञायकका अर्थात् द्रव्यसामान्यका ध्रुव तत्त्वका ही आश्रय होता है. आलाहा..! ऐसी बात कैसी धर्मकी? याहे जितने प्रत करे, याहे जितने दान, दया, तपस्या करे वल कोँ धर्म नहीं है. वल तो राग और विकल्प है. ...भाँ! यल सब सुना नहीं है. जहां-तहां... यल सुनने मिले ऐसा भी नहीं है. आलाहा..!

ऐसा मनुष्यका देल, उसमें प्रभु! तूने अनंत-अनंत काल परिभ्रमण करते हुअे अनंत भव हुअे. आलाहा..! और यहांसे भी देल छोडकर कहां ज्ञाना? अपनी सत्ता तो अनादिअनंत है. उस सत्ताका कहां रहना? उसका आश्रय यद्वि किया होगा तो वहां रहेगा. आलाहा..! आलाहा..! ऐसी बात है.

‘ज्ञायकका-‘ध्रुव’का जेअ अेक क्षण भी नहीं लटता.’ धर्मीजवको प्रारंभसे ध्रुव ओरकी ञटक, ध्रुवका जेअ क्षणके लिये भी नहीं लटता. आलाहा..! ध्रुवको रभकर सब बात है. भवे भजन हो, भक्ति हो, प्रताद्वि हो, होता है व्यवहार, परंतु

यह चीज हो तो वह व्यवहार पुण्यबंधका कारण है. अंतरकी चीज न हो तो व्यवहार राग क्रोध करे, आत्माको कुछ लाभ नहीं है. आलाला..! ज्ञायक अके क्षण भी नहीं हटता. 'दृष्टि ज्ञायकके सिवा किसीको स्वीकार नहीं करती...' आलाला..! सम्यग्दृष्टि-सत्य दृष्टि ध्रुवके सिवा किसीका स्वीकार नहीं करती. आलाला..! दृष्टि अपना स्वयंका भी स्वीकार नहीं करती. आलाला..! अंदर ध्रुव चीज भगवान विराजता है. आलाला..! अके पामर प्राणी साधारण हो, उसे ऐसा कलना कि तू प्रभु है. उसे ऐसा लगे, यह क्या कहते हैं. भाई! तू प्रभु है, पूर्ण भगवान है. अंदर पूर्ण शक्ति पडी है. तेरा लक्ष्य उस ओर गया नहीं. ध्रुव ओरका तेरा जुकाव अनंत कालमें कभी गया नहीं. आलाला..!

'दृष्टि ज्ञायकके सिवा किसीको स्वीकार नहीं करती..' ओहोहो..! पंच परमेष्ठीको दृष्टि स्वीकार नहीं करती. दृष्टिमें तो भगवान पूर्णानंदका नाथ ध्रुव स्वप्न.. आलाला..! उसमें शरीर सुंदर मिले, उसमें कुछ पैसा मिले ठसलिये घुस जाय. जन्म-मरणका अंत आये नहीं. कहां-कहां रभडता है. कहां निगोद और नर्क, यौरासी लाभ योनी. आलाला..! उसे टालनेका उपाय तो यह अके ही है. 'ध्रुवके सिवा किसी पर ध्यान नहीं देती;...' दृष्टि ध्यान नहीं देती. दृष्टि ध्रुवके सिवा कहीं ध्यान नहीं देती. आलाला..! यह बलिनके वचन है. आज बलिनका जन्मदिवस है. आला..!

'अशुद्ध पर्याय पर नहीं,...' वीतराग ओरका स्मरण आदि, उस पर भी दृष्टि नहीं है. आला..! शुद्ध पर्याय पर नहीं. आलाला..! शुद्ध पर्याय आनंदकी प्रगट दुयी, त्रिकावी ध्रुवके अवलंबनसे, दृष्टि शुद्ध पर्याय पर भी नहीं है. आलाला..! कठिन बात है. शुद्ध पर्याय पर भी दृष्टि नहीं है. दृष्टि तो अके ही त्रिकाव भगवान अतीन्द्रिय आनंद एवं सुभका धाम. आला..! ऐसी जो वज्र जैसे शाश्वत चीज, दृष्टि उसके सिवा कहीं टिकती नहीं. धर्मकी दृष्टि उसके सिवा कहीं टिकती नहीं. 'किसी पर ध्यान नहीं देती;...' हो, सुने. परंतु अंदर दृष्टि जिस पर है, वह दृष्टि दूसरी जगह ध्यान नहीं देती. आलाला..!

'यद्यपि साथ वर्तता हुआ...' दृष्टि सम्यग्दर्शन है, उसका ध्येय तो ध्रुव है. उसके सिवा कहीं ध्यान नहीं देत. परंतु दृष्टिके साथ जो ज्ञान है,.. आला..! है? 'ज्ञान सबका विवेक करता है,...' ज्ञान सबको जानता है. विवेकका अर्थ जानता है. जैसे है वैसे उसे जाने. आलाला..! १२वीं गाथामें कहा है न? समयसार. ११में कहा, 'भूदत्थमस्सिदो' भूतार्थ त्रिकाव त्रिकाव त्रिकाव सनातन सत्य. उसको पकडनेसे प्रभु! तुझे सम्यग्दर्शन होगा. सम्यग्दर्शनमें केवलज्ञान लेनेकी ताकत है.

आलाला..! उसके सिवा अपूर्ण दशा हो, शुद्ध अल्प हो, अभी पूर्ण न हो और शुद्धता अल्प हो, अशुद्धता हो, वहां कदा है कि ज्ञाना हुआ प्रयोजनवान है. 'तदात्वे' ऐसा संस्कृत पाठ है. वह है, व्यवहारका विषय है. परंतु वह विषय ज्ञाननेवायक है, आश्रय करनेवायक नहीं. आलाला..! ऐसा सब डेरदार. पूरा दिन व्रत करना, तपस्या करनी, उपवासमें रुकना, चोविलार, जमीकंद नहीं जाना, छ परबी दया पालनी, छ परबी ब्रह्मचर्य पालना. प्रभु! वह सब किया है. आत्मा तो आनंदका नाथ ज्ञायकस्वरूप है. वह ज्ञायक कोई भी विकल्पमें आता नहीं. ज्ञायक विकल्पमें कभी आता नहीं. आला..! विकल्प और ज्ञायक, दोनों बिलकुल भिन्न चीज रहती है. आलाला..!

कहते हैं कि दृष्टिके साथ... दृष्टि द्रव्यके सिवा किसीको स्वीकारती नहीं. परंतु उस दृष्टिके साथ वर्तता ज्ञान सबका विवेक करता है. जाने कि यह मर्यादा धतनी भीली है, अभी धतना बाकी है, मुझे अभी केवलज्ञान बाकी है. यह सब विचार ज्ञानदृष्टिमें आते हैं, द्रव्यदृष्टिमें नहीं. आलाला..! कल तो कदा था न? आलाला..! भगवान! पूर्णानंद जिसकी अपार महिमा, अपार शक्ति, उसके आश्रयसे सिद्धपद जो हुआ तो यहां परमात्मामें तो अभी उससे अनंतगुना पडा है. परंतु वह द्रव्य, अब सिद्धपर्यायसे विशेष पर्याय करेगा, ऐसा होता नहीं. क्या कदा? द्रव्यके आश्रयसे समकितसे सिद्धपद प्राप्त हुआ. परंतु धतनी ताकतवाला है तो वह सिद्धपदसे आगे कोई शुद्धि बढाये, ऐसा नहीं है. वह तो सिद्धपदकी पर्याय वहां पर्यायरूपसे पूर्ण है, वस्तु स्वरूपसे अंदर पूर्ण है. और पूर्ण होनेके बावजूद, अचिंत्य और पार होने पर भी सिद्धपदकी पर्यायके सिवा आगे और भी शुद्धि कर दे, ऐसा है नहीं. आलाला..! पूर्ण पद प्राप्त किये बिना रहे नहीं. स्वका आश्रय लेते हैं तो पूर्ण पद प्राप्त किये बिना रहे नहीं और पूर्णसे आगे जानेका करना नहीं है. कहां जाये? आलाला..! द्रव्य महाप्रभु है. पर्याय तो उसके आगे पामर है. द्रव्यके आगे पर्यायकी कोटि, किंमत अलग है. उस पर्यायमें बढावा करना, द्रव्यमें बहुत महिमा है, बहुत गुण है, बहुत गंभीर.. गंभीर.. गंभीर चीज पडी है तो प्रारंभसे सिद्धपद तक आश्रय लेगा, उसके बाद विशेष पर्याय करनी है, ऐसा है नहीं. आलाला..! वहां मर्यादा हो गयी.

मुमुक्षु :- सिद्धपद तो..

उत्तर :- पर्यायमें पूरी हुयी है. वस्तुमें नहीं. आलाला..! वस्तु तो पूर्णानंदका नाथ. ऐसी तो अनंत-अनंत साद्विअनंत, केवलज्ञानकी साद्विअनंत पर्याय अेक

ज्ञानगुणमें है. आह्लाहा..! ऐसी क्षायिक समकितकी साद्विअनंत पर्याय अेक श्रद्धागुणमें है. शांति-वीतरागता-शांति, साद्विअनंत शांति-वीतरागता अंदर अेक चारित्रगुणमें है. आह्लाहा..! ऐसी साद्विअनंत अनंत.. अनंत.. अनंत पर्याय उसके गुणमें है. फिर भी वल गुण विशेष करे नहीं और गुण पूर्ण किये बिना रहे नहीं. आह्लाहा..! अरे..! उसका विश्वास कैसे आये? क्योंकि बाहरसे सब किया है. शरीर, वाणी, मन, यल, वल. अंदर चैतन्यदल प्रभु सनातन अस्ति, मौजूदगी, लयाती अनाद्वि सनातन सत्य उस पर दृष्टि किये बिना, सम्यक्दर्शनकी प्रारंभ दशा लोती नहीं. प्रारंभसे पूर्णता तक परमात्मा द्रव्यका आश्रय है. आह्लाहा..! भूअ तो देभिये!

पूर्ण पर्याय प्रगट लुयी. लूतकालसे लविष्यकाल अनंत गुना है. लूतकालमें जितनी पर्याय लो गयी, उसकी संख्यासे लविष्यकी पर्याय अनंतगुनी हैं. आह्लाहा..! फिर भी वल पर्याय शुद्ध लो गयी, अस, वलं पूर्ण लो गयी. अंदर तो पार नहीं है. पर्यायमें ँतनी है, परंतु अंदरमें पार नहीं है. ओलोलो..! मल भजना चित् यमत्कारी अंदर वस्तु, वल तो ज्ञानमें ज्ञेयइपसे ज्यालमें आये, तल उसकी महिमा और महत्ताकी किंमत लो. भजर बिना किसकी किंमत करे? वस्तु अंदर कौन है प्रभु? देलदेवलमें भगवान विराजता है. आह्लाहा..! वली यलं कलते हैं.

‘यद्यपि साथ वर्तता लुआ ज्ञान सबका विवेक करता है,...’ जलं-जलं जे-जे लो वल ज्ञानता है. ‘तथापि दृष्टिका विषय तो सदा अेक ध्रुव...’ आह्लाहा..! दृष्टिका विषय अर्थात् ध्येय अर्थात् लक्ष्य, दृष्टिका लक्ष्य तो अकेला ध्रुव है. वल कभी लटता नहीं. और ध्रुवसे लटा वल धर्ममें आया नहीं. आह्लाहा..! ऐसी बात है. लोर्गोंने बाहरसे मान लिया है. अंदरमें ज्या चीज है, कितनी ताकत है, कितना सामर्थ्य है, उसमें कितनी यमत्कारिक वस्तु पडी है, अनंतानंत यमत्कारिक शक्ति है. अनंत यमत्कृतिवाली अनंती शक्ति है. आह्लाहा..! फिर भी सिद्धपद पूर्ण लुआ तो अस, भलास लो गया. परंतु यल पूर्ण यलं रल, वल पूर्ण वलं रल. यलं कमी लोती नहीं. सिद्धपद प्रगट लुआ तो भी द्रव्यमें कमी नहीं लोती. आह्लाहा..! ँतना सब आया न? केवलज्ञान, केवलदर्शन, अनंतवीर्य, अनंतआनंद. आह्लाहा..! सर्व गुणकी अनंत-अनंत व्यक्ति प्रगट लुयी. फिर भी अंदरमें कुछ कमी नहीं लुयी. आह्लाहा..! वल तो पूर्णानंदका नाथ वली का वली है. और उसकी पर्यायमें लिन अवस्था-अेक अक्षरके अनंतवें भागमें निगोदमें है तो भी द्रव्यमें पुष्टि है, बाहर ज्याद नकला नहीं है ँसलिये अंदर ज्याद पुष्टि है, ऐसा है नहीं. आह्लाहा..! कोर् अलौकिक वस्तु है. आह्लाहा..! ँस वस्तुकी दृष्टि बिना दूसरी चीजकी कोर्

किंमत नहीं है. आलाहा..! बारह अंगके ज्ञानकी भी किंमत नहीं. आला..! इस चीजके आगे बारह अंग भी विकल्प है. आलाहा..! बारह अंगका लक्ष्य करे तो भी विकल्प है. प्रभु तो निर्विकल्प दशा अंदर है. उसके आगे बारह अंग तो साधारण है. अरे..! लोगोंको बैठना कठिन पड़े.

बारह अंग कि जिसमें अरबों अक्षर हैं, उसका अंतर्मुहूर्तमें स्वाध्याय कर ले. आलाहा..! कैसे यह सब? असंख्य समयमें अनंत गुणोंकी अनंत पर्यायोंकी स्वाध्याय कर ले. छहों द्रव्यकी स्वाध्याय अंतर्मुहूर्तमें करे. बारह अंगका स्वाध्याय अंतर्मुहूर्तमें करे. क्या है यह? आलाहा..! यहां तो थोडाबहुत आये, पांच-पचीस-पचास श्लोक आये तो (अभिमान चढ जाय). यहां तो कहते हैं, आलाहा..! वह पूर्ण हुआ यहां पूर्ण दशा ज्ञायकके आश्रयसे लुयी. फिर भी पूर्ण दशा लुयी तो ज्ञायकमें कुछ कमी लुयी, जैसा नहीं है. और पर्यायमें अल्प ज्ञान अक्षरके अनंतवें भागमें निगोदमें हो तो उसके द्रव्यमें वृद्धि नहीं लुयी. आलाहा..! जैसा कैसा स्वरूप! इतना केवलज्ञान आदि अनंत-अनंत गुण प्रगट हो, तो भी अंदर वैसाका वैसा! आलाहा..! अचिंत्य यमत्कारी भगवान है. उसकी बातें, बापू!

पंचाध्यायीकार तो कहते हैं कि, बारह अंग भगवानके श्रीमुजसे आये हैं, वह स्थूल बात आयी है. लालचंद्रभाई! आलाहा..! उसकी गंभीरता जो ज्ञाननेमें आये वह बात बाहर नहीं आती. आला..! बारह अंग. चौदह पूर्व तो उसका अेक भाग है. बारह अंग तो उससे विशेष है. आलाहा..! अंतर्मुहूर्तमें असंख्य समयमें बारह अंगका स्वाध्याय कर ले. गजब! यह क्या है? प्रभु! आला..! इतनी ताकत तो श्रुतज्ञानकी भूमिकामें है. श्रुतज्ञानकी भूमिकामें इतनी ताकत है. आलाहा..! अंतर्मुहूर्त असंख्य समयमें कितने शब्द! आचारंगके १८००० पद, अेक पदमें ५५ कोड श्लोक, उससे उबल सूयगांग, उससे उबल ढाणांग. बारह अंगकी तो बात ही क्या करनी! ओहो..! प्रभु! अंदर बहिनमें आया है, इसमें अेक जगल आया है. बारह अंग अंतर्मुहूर्तमें ज्ञान ले, तो भी उसकी कोई विशेष किंमत नहीं है. आलाहा..! अंतर्मुहूर्तमें बारह अंग! प्रभु! किसको कहें! स्वाध्याय कर ले तो भी उसकी किंमत नहीं है.

भगवान ध्रुव, वहांसे दृष्टि हटती नहीं. आलाहा..! यह चीज करनेकी है. पढकर, समझकर, समझकर या निवृत्ति लेकर यह करना है. आलाहा..! 'ज्ञान सबका विवेक करता है तथापि दृष्टिका विषय तो सदा अेक ध्रुव ज्ञायक ही है, वह कभी छूटता नहीं है.' आला..! बादमें बहिनने यहांका नाम दिया है. यह उपदेश यहांका है. अब, उ४६. इसमें किसीने लिखा है. साढे तीनसौमें अेक कम.

यकवर्ती, बलदेव और तीर्थकर जैसे 'यह राज्य, यह वैभव-कुछ नहीं चाहिये' इस प्रकार सर्वकी उपेक्षा करके एक आत्माकी साधना करनेकी धुनमें अकेले जंगलकी ओर चल पडे! जिन्हें बाह्यमें किसी प्रकारकी कमी नहीं थी, जो चाहें वह जिन्हें मिलता था, जन्मसे ही, जन्म होनेसे पूर्व भी, ईन्द्र जिनकी सेवामें तत्पर रहते थे, लोग जिन्हें भगवान कहकर आदर देते थे-ऐसे उत्कृष्ट पुण्यके धनी सब बाह्य ऋद्धिको छोड़कर, उपसर्ग-परिषर्णोंकी परवाह किये बिना, आत्माका ध्यान करनेके लिये वनमें चले गये, तो उन्हें आत्मा सबसे महिमावंत, सबसे विशेष आश्चर्यकारी लगा होगा और बाह्यका सब तुच्छ भासित हुआ होगा तभी तो चले गये होंगे न? इसलिये, हे श्रुप! तू जैसे आश्चर्यकारी आत्माकी महिमा लाकर, अपने स्वयंसे उसकी पहचान करके, उसकी प्राप्तिका पुरुषार्थ कर. तू स्थिरता-अपेक्षासे बाहरका सब न छोड सके तो श्रद्धा-अपेक्षासे छोड. छोडनेसे तेरा कुछ नहीं जायगा, उलटा परम पदार्थ-आत्मा-प्राप्त होगा. ३४८.

'यकवर्ती, बलदेव और तीर्थकर...' अरे..! उनका वैभव क्या था, वह उसके भ्यावमें आना मुश्किल है. आलाहा..! रावण जैसे नरकमें जानेवाला, जिनके रूटिकके मकान. आलाहा..! यहांसे मकरक नरकमें गये. उसकी कोई किमत नहीं है. यहां कलते हैं, 'यकवर्ती, बलदेव और तीर्थकर जैसे 'यह राज्य, यह वैभव-कुछ नहीं चाहिये'...' एमें यह राज्य और वैभव नहीं चाहिये, प्रभु! आलाहा..! यकवर्तीका राज नहीं, ईन्द्रका ईन्द्रासन नहीं. आलाहा..! बलदेव तीन षंडके धनी. एमें कुछ नहीं चाहिये, एमें तो एक आत्मा चाहिये, अस. आलाहा..!

वागी लगन हमारी जिनराज सुजस सुण्यो मैं,  
वागी लगन हमारी जिनराज सुजस सुण्यो मैं,  
कालूके कलैं अब कबलू न छूटे, लोकवाज सब डारी.

दुनिया कैसे मानेगी, क्या कहेगी. निश्चयभासी है ऐसा कहेगी. आलाहा..! 'वागी लगन हमारी जिनराज...' जिनराज अर्थात् आत्मा, हां! सुजस सुना. इस भगवानकी बात सुनी. भगवानका सुजस सुना कि यह तो चैतन्यमूर्ति महा भगवान. आलाहा..!

वागी लगन हमारी सुजस सुण्यो मैं,  
कालूके कलैं अब कबलू न छूटे, लोकवाज सब डारी.

दुनियाको दूसरी किमत है. जैसे-जैसे व्रत और तप करे उसका कुछ नहीं और यह एक आत्माका ध्यान करे उसमें केवलज्ञान हो जाये. आपकी बातें बहुत (जिंयी)!

ऐसे मञ्जरी करे. करे, बापू! आलाहा..!

यहां कलते हैं, राज्य आदि वैभव कुछ नहीं चालिये. आलाहा..! ईन्द्रका ईन्द्रासन ईन्द्रको नहीं चालिये, प्रभु! अभी समझिती ईन्द्र है. उनकी एक रानी है. कोंडों रानीमें एक रानी है, वह भी अकावतारी-अक लवतारी भोज्ञ ज्ञानेवाली है. वहांसे निकलकर मनुष्य लेकर भोज्ञ ज्ञानेवाली है. आलाहा..! वह भी हमें कुछ नहीं चालिये. एक मेरा नाथ, जिस ध्रुवमें मेरी दृष्टि पडी, वह दृष्टि हटती नहीं. और सिद्धपद लेकर ही छूटकारा है. सिद्धपद लेकर ही छूटकारा है. उसके सिवा कहीं अटकना नहीं है. और पीछे... वह तो पहला काल ऐसा था. जैसे कालमें गिरना तो नहीं है, परंतु इस पंचमकालमें ऐसा आता है, उटवीं गाथा. आलाहा..! जो हमें यह प्रगट हुआ है, वह अब गिरनेवाला नहीं है. परंतु प्रभु! आपको वीतराग तो भिसे नहीं हैं. पंचमकालमें वीतरागका तो विरह है. परंतु प्रभु! वीतरागके सिवा मला महिमावंत प्रभु मैं तो यहां हूं न!! पंचमकालमें भी मैं तो आत्मा अनंत-अनंत वैभव, अनंत-अनंत ऋद्धि और अनंत चैतन्य यमत्कारी वस्तु अंदर पडी है. आलाहा..! उसके आगे दुनियाकी कोई किमत नहीं है. आलाहा..!

‘ईस प्रकार सर्वकी उपेक्षा करके...’ चक्रवर्ती, बलदेव और तीर्थकर. पौने नौ बजने आये न? पौन घण्टा करना है? ‘अक आत्माकी साधना करनेकी धुनमें अकेले जंगलकी ओर चल पडे.’ आलाहा..! ८६ कोंड स्त्रिका सालिबा अकेला जंगलमें चला गया. ईस ऋद्धिमें बाह्यमें प्रगट करनेको. भगवान परमात्मा स्वयं है, उसे प्रगट करनेको चल पडे. पौन घण्टा हो गया. (श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव!)